E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

बौद्ध धर्म में कर्मवाद और पुनर्जन्म का विवेचन

डॉ. सुरेश

असिसटेंट प्रोफेसर इतिहास,संस्कृति पुरातत्व विभाग

चौधरी रणवीर सिंह विश्वविद्यालय, जीन्द

Paper Rcevied date
05/04/2025
Paper date Publishing Date
10/04/2025
DOI
https://doi.org/10.5281/zenodo.15546376

कर्मवाद बौद्ध–धर्म का महत्वपूर्ण सिद्धान्त है जिसका उदय प्रतीत्यसमुत्पाद के सिद्धान्त से हुआ है। महात्मा बुद्ध भी यही कहते हैं कि कर्म ही प्रधान है। कर्त्ता कर्म करने में स्वतंत्र है। समस्त प्राणी अपने कर्मों के अनुसार ही फल प्राप्त करते है। जो जैसा करता है वैसा ही फल प्राप्त करता है। कर्म का विधान कहीं बाहर से आरोपित नहीं किया जाता है बल्कि यह हमारी अपनी ही प्रकृति में कार्य करता है। मानसिक आदतों का निर्माण, बुराई की ओर बढ़ती हुई प्रवृति–आवृति का दृढ़ होता जाने वाल प्रभाव सब कुछ कर्म–विधान के अंतर्गत आता है। कर्मफल से कोई भी व्यक्ति बच नहीं सकती है। भूतकाल वास्तव में वर्तमान एवं भविष्य को जन्म देता है।

कर्मवाद के अनुसार व्यक्ति अपने कर्मों के लिए स्वयं उत्तरदायी है। कर्म का फल अवश्य प्राप्त होता है। जब एक पीडित व्यक्ति बुद्ध के पास गया, जिसके सर से खुन बह रहा था तो महात्मा बुद्ध उनसे कहते हैं कि हे अर्हत ! इसे इसी प्रकार सहन करो क्योंकि तुम उन कर्मों का फल भोग रहे हो जिसके लिए तुम्हें सदियों तक नरक का कष्ट सहन करना पड़ता। कर्म विधान के अनुसार कर्मों का फल कर्ता के चरित्र के अनुसार प्राप्त होता है। यदि किसी ऐसे व्यक्ति ने

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

जिसका आचरण सही नहीं है कोई ऐसा पाप कर्म किया हैं तो उसे नरक की यातनाएँ अवश्य सहन करनी पड़ेंगी परन्तु किसी सदाचारी व्यक्ति से कोई बुरा कर्म हो जाता है तो उसे थोड़ा सा कष्ट सहन करने के उपरान्त छुटकारा मिल जाता है। एक उदाहरण के द्वारा इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि यदि कोई व्यक्ति पानी के प्याले में नमक का ठेला डाल दे तो वह पानी नमकीन हो जायेगा और पीने के योग्य नहीं रहेगा परन्तु यदि उस नमक के ढेले को गंगा नदी में डाल दिया जाये तो गंगा का पानी जरा भी दूषित नहीं होगा।

समाज के जीनों में व्याप्त विषमता के बारे में जब महात्मा बुद्ध से सवाल किया जाता था कि इसका कारण क्या है तो उनका यही उत्तर था कि कम्म शुभनामक माणर्वक ने जब उनसे पूछा कि हे गौतम । क्या हेतु है, क्या प्रत्यय है कि सब मनुष्य होते हुए भी मनुष्य रूपवालों में हीनता और उत्तमता दिखाई पड़ती है? हे गौतम । यहां मनुष्य होते हुए अल्पायु भी देखने में आते है और दीर्घायु भी, बहुरोगी भी अल्परोगी, कुरूप, रूपवान, समर्थ, असमर्थ, दरिद्र, धनहीन निर्बुद्धि और प्रज्ञावान दिखाई पड़ते हैं। हे गौतम । क्या कारण है कि यहां प्राणियों में हीनता और उत्तमता दिखाई पड़ती है? भगवान बुद्ध के द्वारा इसका जो उत्तर दिया गया वह बौद्ध के स्थान को पूर्णतया विनिश्चित कर देता है। भगवान बुद्ध का उत्तर था कि हे माणवकं। प्राणी कर्मस्वक (कर्म ही है अपना जिनका) कर्मदायाद, कर्मयोनि, कर्मबन्धु और कर्मप्रतिशरण है। कर्म ही प्राणियों को हीनता और उत्तमता में विभक्त करता है।

इस प्रकार उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि कर्म ही बौद्ध के अनुसार विषमता का मूल कारण है। कर्म ही सब प्राणियों को उत्तमता एव हीनता में विभक्त करता है। जिसका जैसा कर्म उसका वैसा ही फल है। कोई भी व्यक्ति स्त्री या फिर पुरुष यदि हिंसक है, क्रोधी है. ईष्यालु है, लोभी है अभिमानी है और पापकर्मों में ही हमेशा अपने मन को लगाये रखता है तो वह उस काया को छोड मरने के पश्चात दुर्योनि में पैदा होता है और यदि मनुष्य योनि में आता है तो वह हीन एवं दरिद्र होता है। ठीक उसी प्रकार कर्म शुभ है वह सुयोनि में जन्म ग्रहण करता है और यदि यह मनुष्य योनि में आता है तो उत्तम, स्वस्थ, समृद्ध और प्रज्ञावान होता है। इस प्रकार दुर्योनि एच सुयोनि में उत्पन्न होना कर्म के शुभ एवं अशुभ हाने पर ही निर्भर करता है। सदाचार से सुगति और दुराधार से दुर्गति प्राप्त होती है।

किसी व्यक्ति वो चित्त को अपने चित्त से जानकर और उसके कर्मों का अपनी ज्ञान दृष्टि के आधार पर प्रत्यक्ष कर भगवान बुद्ध यह जान जानते थे कि मरने के उपरान्त यह अशुभ या शुभ योनि में उत्पन्न होगा। इसी प्रत्यक्ष अनुभूति के आधार पर भगवान बुद्ध का भिक्षुओं के सामने साक्षी बनते हुए यह कहना कि भिक्षुओं! क्रोध को छोडो, लोभ को छोडो, द्वेष को छोडो, मैं तुम्हारा साक्षी होता हूँ, तुम्हें इस आवागमन में जाना नहीं पड़ेगा। कर्म के नियम में उनका जीवित विश्वास था। उन्होंने अनेक बार कहा था कि उनके समान यदि प्राणी गी यह जान जाए कि

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

दुष्कर्म एवं सुकर्म के परिणामस्वरूप ही दुर्गति और सुगति प्राप्त होती है तो वे दुष्कर्मों को छोडकर सुकर्म करने लग जायेंगे। इस प्रकार कर्म सिद्धान्त से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि सब मनुष्य समान हैं। यदि कोई हीन या उत्तम होता है तो वह अपने कर्मों के अनुसार है। अतः जन्म नहीं कर्म ही प्रमुख है। भगवान बुद्ध कहते हैं कि जन्म से न कोई ब्राहाण होता है और न ही अन्व्यज। अन्य कोई प्राणी कर्म के अनुसार ही कोई व्यक्ति ब्राह्माण होता है और कर्म के अनुवसार ही कोई व्यक्ति अन्व्यज होता है। बुद्ध का यही कहना था कि जाति मा पुच्छ चरण व पुच्छ अर्थात किसी व्यक्ति से उसकी जाति नहीं पूछनी चाहिये बल्कि आचरण की परीक्षा करनी चाहिये क्योंकि खराब से खराब लकडी से भी पवित्र अग्नि उत्पन्न की जा सकती है।

धम्मपद के अनुसार प्रत्येक पापी व्यक्ति अपने पापों से घिरा रहता है। किसी व्यक्ति के पापकर्म वैसे ही दुषित करते हैं जैसे उसके सद्कर्म उसे पवित्र करते हैं। पापकर्म व्यक्ति का उसी प्रकार अनुशरण करते हैं जिस प्रकार राख अग्नि का अनुशरण करती है। पापी को इहलौकिक और पारिलौकिक संसार में कष्ट भोगना पड़ता है। सद्कर्म मृतव्यक्ति का पारलौकिक संसार में वैसे ही स्वागत करते हैं जैसे किसी व्यक्ति के सगे संबंधी एक लंबी यात्रा से वापस आने पर उसका स्वागत करते हैं। कर्म संचयी हैं इसलिए छोटे से छोटे कर्म की भी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। छोटे से छोटे कर्म संचित होकर उसी प्रकार एक बड़े कर्म में परिणत हो जाते हैं जिस प्रकार बूंद–बूंद से घड़ा भर जाता है। आकाश, समुद्रतल की गहराई या फिर पहाड़ की गुफा सारे संसार में कहीं पर भी ऐसा स्थान नहीं है जहाँ व्यक्ति अपने कर्मों के प्रभाव से बच सके। अतः पापकर्मों से अलग रहना और मन को शुद्ध रखना व्यक्ति का कर्त्तव्य है।

इस प्रकार एक बात तो उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाती हैं कि बौद्ध दर्शन एवं नीतिशास्त्र में कर्म ही प्रधान है। अतः सदकर्मों की ही शरण लेनी चाहिये दुष्कर्मों की नहीं। बुद्ध का बार–बार यही कहना था कि कर्म ही तुम्हारा रक्षक है इसलिए कर्म की ही शरण लो अन्य की नहीं। उनका कहना था। कि जो व्यक्ति सदकर्म करता है, वह उनसे दूर होते हुऐ भी उनके अत्यधिक निकट है परन्तु इसके विपरीत जो व्यक्ति दुष्कर्म करता है, वह उनके पास होते हुए भी उनसे बहुत दूर है। इसलिए यही कहना था कि कर्मदायाद बनो। मैंने हे निक्षुओ। जो उपदेश तुम्हे देना था दे दिया हे भिक्षुओं! ये कर्म वृक्ष मूल है, ये सूने घर है, अतः ध्यान करो प्रमाद न करो। कर्म ही तुम्हारा कल्याण है।

कर्मवाद और पुनर्जन्म :

पुनर्जन्म कर्मवाद पर ही निर्भर करता है। पुरम्तु बौद्ध दर्शन में पुनर्जन्म का अर्थ नित्य आत्मा का एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करना नहीं है। आत्मा कोई नित्य द्रव्य नहीं है बल्कि पांच स्कन्धों का एक संघात है जो क्षण–क्षण में परिवर्तित होता रहता है। बौद्ध दर्शन का क्षणिकवाद तो आत्मा को क्षणिक मान कर कर्मान्तर और जन्मान्तर का सिद्धान्त ही समाप्त कर देता है। यदि

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

क्षण–क्षण अलग–अलग आत्माओं की स्थिति मान भी ली जाये तो एक आत्मा में संचित कर्म दूसरी आत्मा में कैसे प्रवेश कर जाते हैं। महात्मा बुद्ध ने पुनर्जन्म को स्वीकार किया है। जीव अपने कर्म के अनुसार ही नया जीवन धारण करता है। वैदिक मत भी इस बात को स्वीकारता है परन्तु आत्मा के शाश्वत अस्तित्व को मानने के कारण वहां पर किसी प्रकार की आपत्ति नहीं है परन्तु बौद्धमत आत्मा के नित्य अस्तित्व को ही अस्वीकार करता है तब सवाल उठता है कि पुनर्जन्म किसका होता है? जिसने कर्म किया वह तो अतीत में लीन हो जाता है और जिसने जन्म लिया है, उसने वे कर्म नहीं किए है, जिसके फल भोगने के लिए नए जन्म की आवश्यकता पड़े ।

भगवान बुद्ध ने पुनर्जन्म को समझाने के लिए दीपक की ली का दृष्टान्त दिया है। दीपक रात भर जलता रहता है परन्तु उसकी लौ सारी रात एक जैसी नहीं रहती है। उसमें लगातार परिवर्तन होता रहता है। दीपक की लौ वास्तव में एक नहीं होती बल्कि अनेक होती है और उसमें एक अविछिन्नता रहती है। इसी प्रकार इस जीवन के चैतन्य (विज्ञान) की प्रथम लौ को जन्म देती है। विज्ञानों की सन्तान में अविच्छिन्नता रहती है लेकिन विज्ञान बराबर बदलते रहते हैं। प्रत्येक विज्ञान एक क्षण तक ही रहता है और फिर लुप्त हो जाता है। इस प्रकार कर्मवाद, अनात्मवाद और पुनर्जन्म का समन्वय हो जाता है। सच तो यह है कि विज्ञान की श्रृंखला हर क्षण बदलती रहती है परन्तु यह नित्य सी लगती है। एक जन्म के अन्तिम विज्ञान के समाप्त होते ही दूसरे जन्म के प्रथम विज्ञान का जन्म होता है। इस प्रकार आत्मा को अनित्य मानते हुए भी बौद्ध दर्शन पुनर्जन्म को स्वीकार किया है

कर्मबन्धन से निर्वाण :

कर्म दो प्रकार से पैदा होते है। एक आसक्त भाव अर्थात् राग द्वेष और मोह से और दूसरा अनासक्त भाव से । आसक्त भाव से पैदा होने वाले कर्म करने से पुनर्जन्म एवं बंधन होता है जबकि अनासक्त माव से कर्म करने से जन्म–मरण के चक्र से मुक्ति मिल जाती है। मुक्ति अर्थात निर्वाण की अवस्था में कर्म का प्रभाव समाप्त हो जाता है। इससे सभी पिछले कर्म और उनके परिणाम सदा के लिए समाप्त हो जाते हैं। निर्वाण प्राप्त होने पर कर्म अवश्य समाप्त हो जाते हैं परन्तु इसका अर्थ निष्क्रियता नहीं है। वास्तव में सभी कर्मों का फल नहीं होता है बल्कि उन्हीं कर्मों का फल होता है जो अविद्याजनित वासनाओं से प्रेरित होता है। निर्वाण प्राप्ति के पश्चात भी कर्म तो अवश्य होते है परन्तु फल नहीं होता है जैसे भूजे हुए बीज बौने से पौधा नहीं उगता है।

निष्कर्ष :

अन्त में निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि कर्मवाद का उदय प्रतीत्यसमुत्पाद से हुआ है। प्रतीत्यसमुत्पाद कारण– कार्य सम्बन्ध का ही एक वैज्ञानिक सिद्धान्त है जो यह कहता है कि

E-ISSN No: 2456-6713 Print ISSN No: 3048-6459

International Educational Applied Research Journal

Peer-Reviewed Journal-Equivalent to UGC Approved Journal

A Multi-Disciplinary Research Journal

इसके होने से इसकी उत्पति होती है अर्थात कर्मवाद के दृष्टिकोण से देखे तो भलाई से भलाई और बुराई से बुराई पैदा होती है। कर्मवाद भी उतना ही वैज्ञानिक सिद्धान्त है जितना प्रतीत्यसमुत्पाद । कर्मवाद की अन्य विशेषता यह है कि इसमें आत्मा को नित्य नहीं माना गया है।

बौद्ध दर्शन में यह दर्शाया गया है कि नित्य आत्मा के अभाव में भी कर्मवाद और पुनर्जन्म की स्थापना की जा सकती है। कर्म का नियम प्रकृति के नियमों की भांति अपने आप ही चलता रहता है। इसको चलाने के लिए किसी पारलौकिक सत्ता की आवश्यकता नहीं है। बौद्ध दर्शन एवं नीतिशास्त्र की आधारशिला कर्म ही है। सब कुछ कर्म के ही अधीन है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को सोच समझकर ही कर्मों का चयन करना चाहिये। सुख–दुख सब कुछ कर्मों के अनुसार ही प्राप्त होता है।

संदर्भ :

1. डॉ एस॰ राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन भाग–1 पृ॰ 357, संस्करण 1976
2. अंगुतरनिकाय 1, 249
3. मज्झिमनिकाय 3/4/5
4. मज्झिमनिकाय 1/5/1
5. धम्मपद, अध्याय 16
6. भरत सिंह उपाध्याय, बौद्ध दर्शन तथा अन्य भारतीय दर्शन, भाग–1, पृ॰ 223, 1954
7. धम्मपद, 16/11/12
8. धम्मपद, 9/12
9. मुज्झिमनिकाय 3/5/10
10. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, धर्म दर्शन की रूपरेखा, पृ॰ 14, प्रथम संस्करण 1962
11. प्रो धर्मबीर, भारतीय दर्शन पृ॰ 59 पाँचवा संस्करण